प्रकाशक—
बैजनाथ केडिया
प्रोप्राइटर
हिन्दी पुस्तक एजेन्सी
१२६, हरिसन रोड,
कलकत्ता ।

हिन्दी पुस्तक एजेन्सीमाला—४६

925
6
269

चित्रमय रामायण

(प्रथम भाग)

प्रकाशक
हिन्दी पुस्तक एजेन्सी
१२६, हरिसन रोड,
कलकत्ता।
शाखा—काशी और दिल्ली।

प्रथम बार] १६८८ [मूल्य ३॥)

प्रकाशक—
बैजनाथ केडिया
प्रोप्राइटर
हिन्दी पुस्तक एजेन्सी
१२६, हरिसन रोड,
कलकत्ता।

मुद्रक
किशोरीलाल केडिया
'वणिक प्रेस'
१, सरकार लेन,
कलकत्ता।

परिचय

रामायणकी कथासे कौन हिन्दू परिचित न होगा ? रामायणके सभी पात्र आदर्श महापुरुष माने और समझे जाते हैं। रामायणकी कथा प्रायः प्रत्येक हिन्दुके घरोंमें पढ़ी जाती है। हिन्दू धर्ममें जितना प्रचार रामायणका है उतना और किसी ग्रंथका नहीं। इसी उद्देश्यसे यह "चित्रमय रामायण" निकाला गया है, जिससे इसके प्रचारमें वृद्धि हो और मनोरंजकताके साथ आदर्श कथाओंका प्रचार अधिकाधिक हो।

चित्रमय रामायणके चित्रोंमें कुछ त्रुटियां रह गयी हैं, जिन्हें अगले संस्करणमें सुधारनेकी चेष्टा की जायगी।

विनीत—

प्रकाशक

हिन्दी-पुस्तक-एजेन्सीमाला—४७

स्वास्थ-साधन

ले०—अध्यापक रामदास गौड़, एम० ए०

इस वृहत् ग्रन्थमें संसारके सभी प्राकृतिक चिकित्सकोंके मतानुसार आरोग्यता प्राप्त करनेकी विधि और रोगसे मुक्त होनेका उपचार बताया गया है। पुस्तक बड़े अध्ययन और अनुभवके साथ लिखी गयी है। विषयको अनेक चित्रों और नकशोंसे खूब सरलताके साथ समझाया गया है।

शीघ्र ही प्रकाशित होगा।

चित्र-सूची

संख्या चित्र		पृष्ठ
१—महर्षि वाल्मीकि	...	१
२—क्रौञ्च-वध	...	२
३—श्रवणकुमार	...	३
४—शृङ्गीऋषि और वारांगना	...	४
५—पुत्रेष्टि यज्ञ	...	५
६—श्रीराम-जन्म	...	६
७—बाल-लीला	...	७
८—सीता-जन्म	...	८
९—विश्वामित्र ऋषिका आगमन	...	९
१०—ताड़का वध	...	१०
११—अहिल्या उद्धार	...	११
१२—प्रथम साक्षात	...	१२
१३—धनुर्भंग	...	१३
१४—परशुराम लक्ष्मण संवाद	...	१४
१५—कैकयी और मंथरा	...	१५
१६—कैकयी कोपभवनमें	...	१६
१७—वनवासकी आज्ञा	...	१७
१८—वनगमन	...	१८
१९—श्रीरामपर केवटकी भक्ति	...	१९
२०—भरतको पादुका प्रदान	...	२०
२१—पंचवटी	...	२१
२२—अनसूयाका सीताको उपदेश	...	२२
२३—शूर्पणखाको दण्ड	...	२३
२४—स्वर्ण मृग	...	२४
२५—भिक्षुकके भेषमें रावण	...	२५
२६—जटायुका वध	...	२६
२७—भक्तोंपर भगवानकी दया	...	२७

महर्षि वाल्मीकि

(१)

महर्षि वाल्मीकि

(१)

उलटा नाम जपत जग जाना

बालमीक भये ब्रह्म समाना——तुलसी।

सत्ययुगमें एक ब्राह्मण था। लूटमारकै आप खाता और कुटुम्ब पालता। एक दिन राहमें सातों ऋषि जाते थे। इन्हें लूटना चाहा। ऋषियोंने कहा

"हत्यारे! इतना पाप किसके लिये बटोरता है!" डाकू बोला "अपने प्यारोंके लिये!" कहा "ज़रा प्यारोंसे पूछ, कि जब तुझे यमके यहां यातना मिलेगी तब कितना बांटेंगे?"

प्रश्न विकट था। डाकू पूछकर आया। ऋषियोंके चरणोंपर गिरा। बोला "कोई न बांटेगा। अब बताओ मेरा उद्धार कैसे होगा!" ऋषियोंने कहा "बस, बैठकर रामनामका जाप कर शुद्ध हो जायगा।" डाकू बोला "यह तो नहीं आता।" ऋषि बोले "मरा, मरा कह।"

* * * * * *

कई हजार वर्ष पीछे सातों ऋषि उसी राह लौटे। वहां मिट्टीका ढूह देखा। एक बाम्बी थी। इसी वल्मीकके भीतरसे चींटी, कीड़े मकोड़े आते जाते थे। पाससे सुननेपर सायँ सायँ धुन पड़ा "राम, राम, राम, राम,।" वल्मीक फोड़ा गया। भीतरसे हाड़की ठठरी निकली, परन्तु यह वही डाकू था जीता जागता। ऋषि बोले!

"प्राचेतस! तुम शुद्ध हो गये। अब तुम्हारा नाम बांबीसे निकलनेके कारण वाल्मीकि हुआ। जिसके नामके प्रतापसे तुम ऋषि हो गये उन्हीं रामकी कथा तुम कहोगे।"

नारदजी आये। वाल्मीकिने उनसे पूछा और नारदजीने संक्षेपसे रामकी कथा कही।

वाल्मीकिजी रामकी कथापर ध्यान करते रहे। एकाएक उनके हियेकी खुल गयीं। उन्होंने सारा रामचरित आदिसे अन्ततक ध्यानमें देखा। अब रामायण ध्यानमें आ गयी तब यह चिन्ता हुई कि कथा कैसे कही जाय इसी चिन्तामें अनेक काल बीत गया।

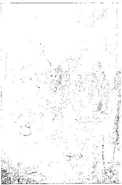

महर्षि वाल्मीकि । মহর্ষি বাল্মীকি ।

क्रौञ्च-बध

(२)

(२)

मा निषाद प्रतिष्ठात्वमगमः शाश्वतीः समाः
यत्क्रौंच मिथुनादेक अवधीः काममोहितम्

वाल्मीकिके आश्रममें शान्ति थी। शिष्य भरद्वाज ऋषिकी सेवामें था। महामुनि ध्यानमें थे। एकाएकी पासके पेड़से क्रौंच पक्षीके चीत्कारका शब्द आया। क्रौंचका जोड़ा तड़फड़ाकर नीचे गिरा। मुनिका ध्यान टूट गया। घायल चिड़ियोंको पकड़नेके लिये निषाद एक ओरसे बढ़ा। बालक भरद्वाज झट चिड़ियेके पास पहुँच वाण निकालने लगा। महामुनि करुणासे पिघल गये। खड़े हो गये और बढ़ते हुए निषादको रोकते हुए करुण स्वरमें यह वाक्य बोल गये—

हतेउ क्रौंच दोउ भोगरत भयउ न हिये विषाद,
कबहुँ न थित थिर होय है तेरो निठुर निषाद।

संसारके पहले कविके दिलने चोट खायी। पीड़ासे उमड़ उठा। करुणरसने बाँसुरीकी तरह उसके स्वरयंत्रको फूंका। जो शब्द निकले वह करुणासे प्रवृत्त शापके थे। पहली कविता थी। वाल्मीकिको आप ही इस श्लोकपर अचरज हुआ। उन्होंने यही ठान लिया कि इसी तरहके पद्योंमें रामायण कहूंगा। उन्होंने रामायणकी कथामें रामजीके वंशके पूर्व पुरुषोंका वर्णन किया। फिर राजा दशरथकी कथा लिखी। तब रामायणकी कथा लिखी।

ক্রৌঞ্চ বধ।　　　　ক্রৌঞ্চ বধ।

श्रवणकुमार

(३)

श्रवणकुमार

(३)

सूर्यकुलमें राजा दशरथ बड़े प्रतापी राजा हुए। इन्हें शिकारका बड़ा शौक था। एक बार जंगलोंमें घूमते घूमते सूरज डूब गया, अँधेरा हो गया। इतनेमें नदीके किनारेसे आवाज आयी। इन्होंने समझा कि हरिण पानी पी रहा है। तुरन्त धनुषपर बाण चढ़ा शब्दके निशानेपर मारा। तुरन्त ही "हा! मरा" यह शब्द सुन पड़े। दशरथ दौड़कर किनारेपर पहुँचे। देखकर धकसे रह गये। एक जवान तपस्वी घड़ा लेकर पानी भरने आया था। घड़ेके शब्दपर राजाने तीर मारा था वह इसी तपस्वीको लगा। राजा बहुत पछताये कि ब्रह्म-हत्या हुई। सरवन बोला "महाराज! डरो मत मैं वैश्य हूं, पर मेरे अन्धे मा बाप प्यासे हैं, उन्हींकी सेवा करता हूं। वह सुनेंगे, तो मर जायँगे। परन्तु अब लाचारी है! तुम्हीं उन्हें जाकर जल पिलाओ। बाण खींच लो। मैं प्राण-त्याग करूं।"

राजाने बाण निकाल लिया। सरवन मर गया। राजा जल लेकर उसके मा बापके पास गये। जल तो पिलाया पर शब्दसे अन्धोंको खटका हुआ। तब राजाने बड़े पछतावेके साथ सब हाल कह दिया।

मा बापने पुत्रके बिछोहमें प्राण त्याग दिये। मरती बेर राजाको शाप दिया कि "जाओ, तुम भी पुत्रके वियोगमें प्राण-त्याग करोगे।" राजा इस शापपर प्रसन्न हुए क्योंकि राजाके सन्तान न थी। सोचा कि वियोगमें भले ही मर जाऊं पर सन्तान इस शापके प्रभावसे होगी तो!

শ্রবণকুমার। শ্রবণকুমার।

शृङ्गीऋषि और वारांगना

(४)

शृंगी ऋषि और वारांगना

(४)

राजा रोमपाद राजा दशरथके मित्र थे। राजा दशरथके पहले एक कन्या शान्ता हुई थी। उन्होंने यह कन्या राजा रोमपादको दे दी। जान बूझकर सन्तानका वियोग सहा, परन्तु शापके अनुसार मृत्यु नहीं हुई। कन्या सयानी हुई। उस समय राजा रोमपादके राज्यमें सूखा पड़ा। ऋषियोंने सलाह दी कि शृंगी ऋषिको बुलाकर उनसे यज्ञ कराइये तो पानी बरसे।

शृंगी ऋषिके सींग थे। यह हरिणीके गर्भसे हुए थे। इनको विभांडक ऋषिने पाला पोसा। जवान हो गये, पर ऐसे बाल ब्रह्मचारी थे कि इन्होंने संसारका कोई हाल नहीं जाना। कभी किसी कन्या या स्त्रीको देखातक न था। विभांडक ऋषि कहीं इन्हें जाने भी नहीं देते थे। संसारके विषयोंका इन्हें पता न था। राजा रोमपादको मुनियोंने सलाह दी कि आश्रममें जब विभांडक ऋषि न हों उस समय वेश्याएं जाकर उन्हें बहका लावें। यहां आनेपर उनका विवाह शान्तासे कर दीजियेगा, तो पीछे विभांडक ऋषिका भी क्रोध शान्त हो जायगा।

आश्रम नदीके किनारे था। सूना पाकर एक दिन वेश्याओंका एक दल नावसे उतरा और ध्यानमें लगे शृंगी ऋषिके सामने नाचने लगा। ऋषिने आंखें खोलीं तो देखकर चकित हुए। समझे कि स्वर्गकी देवता हैं। वेश्याओंके इशारेपर वह उनके पीछे पीछे चले। नावपर बैठ गये। वेश्याओंने घेर लिया। इन्हें नाच गानेमें मुग्ध कर रखा। नाव चल दी।

शृंगी ऋषिका राजा रोमपादने बड़ा आदर सत्कार किया। कन्या व्याह दी। विभांडक ऋषि क्रुद्ध होकर आये परन्तु राजाकी आवभगत और पुत्रके व्याहसे ठंढे हो गये। यज्ञ हुआ। पानी बरसा।

शृंगी ऋषि यज्ञ करानेमें बड़े जानकार और सिद्ध मशहूर हो गये। शृंगी ऋषि अग्नि देवताके बड़े भक्त थे। अग्नि देवता इनसे बहुत प्रसन्न रहते थे।

শৃঙ্গীঋষি এবং বারাঙ্গনা।　　　शृङ्गीऋषि और बाराङ्गना।

पुत्रेष्टि यज्ञ

(५)

पुत्रेष्टि यज्ञ

(५)

राजा दशरथका चौथापन आ गया पर कोई लड़का न था। इस चिन्तासे राजा भीतर ही भीतर घुनते जाते थे। एक दिन गुरुजीके पास जाकर अपना दुखड़ा सुनाया। गुरु वशिष्ठने सोच विचारकर कहा कि शृंगी ऋषिको बुलाकर पुत्रेष्टि यज्ञ कराना चाहिये।

शृंगी ऋषिहिं वसिष्ठ बुलावा
पुत्र काम सुभ जग्य करावा
भगति सहित मुनि आहुति दीन्हे
प्रगटे अगिनि चरू कर लीन्हे
यह हबि बाँटि देहु नृप जाई
जथा जोग जेहि भाग बनाई

पुत्रेष्टि यज्ञ हुआ। अग्नि देवता प्रसाद लिये प्रकट हुए। राजासे बोले "राजन, यह खीर रानियोंको यथायोग्य भाग लगाकर खिला देना। चार पुत्र होंगे। बड़े तेजस्वी और विजयी वीर।"

राजाने खीर ले जाकर कौशल्या और कैकेयीको पहले दिया। फिर दोनोंके हिस्सेसे थोड़ा थोड़ा लेकर सुमित्राको खिलाया। तीनों रानियां गर्भवती हुईं। शृंगी ऋषिका किया हुआ यज्ञ पूरा फल गया। कौशल्याजीके श्रीरामचन्द्र, कैकेयीके भरत, और सुमित्राके लक्ष्मण और शत्रुघ्न उत्पन्न हुए।

पुत्रेष्टि यज्ञ।　　　　পুত্রেষ্টি যজ্ঞ।

श्रीराम-जन्म

(६)

(६)

श्रीरामचन्द्रजी अब अपने तब कौशल्या माताको चतुर्भुजी रूप दिखाया और अपना अवतार होना उनपर प्रकट कर दिया। कौशल्याजीने जगदात्माकी स्तुति की और विनय की कि आप बच्चेके ही रूपमें रहें।

चौपैया छन्द

भये प्रकट कृपाला, दीन दयाला, कौसल्या हितकारी ।
हरषित महतारी, मुनिमनहारी, अद्भुत रूप निहारी ॥
लोचन अभिरामं, तनुघनस्यामं, निज आयुध भुज चारी ।
भूषन बनमाला, नयन बिसाला, सोभा सिंधु खरारी ।
कह दुइ कर जोरी, अस्तुति तोरी, केहि बिधि करउँ अनन्ता ।
माया गुन ग्यानातीत अमाना बेद पुरान भनन्ता ॥
करुना-सुख-सागर सब-गुन-आगर जेहि गावहिं स्रुति संता ।
सो मम हित लागी जन अनुरागी प्रकट भये श्रीकंता ॥
ब्रह्मांडनिकाया निर्मित माया रोम रोम प्रति बेद कहै ।
मम उदर सो बासी,यह उपहासी, सुनत धीर मति थिर न रहै ॥

× × × ×

माता पुनि बोली सो मति डोली तजहु तात यह रूपा ।
कीजिय सिसुलीला अति-प्रिय-सीला यह सुख परम अनूपा ॥
सुनि बचन सुजाना रोदन ठाना होइ बालक सुर भूपा ।
यह चरित जे गावहिं अति सुख पावहिं ते न परहिं भव कूपा ॥

दोहा

बिप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार ।
निज इच्छा निर्मित तनु माया गुन गो पार ।

শ্রীরাম জন্ম। [illegible]

बाललीला
(७)

बाललीला

(७)

श्रीरामचन्द्रजी अपने बचपनमें उसी तरह खेलते कूदते थे जैसे साधारण बच्चे खेलते हैं। भांति भांतिकी लीलाएं करते थे जिन्हें देख शिवजी, कागभुशुंडि और हनुमानजी तकको अचरज होता था और चक्करमें आ जाते थे। जन्मके समय तो शिव और भुशुंडिजी और हनुमानजी मनुष्यका रूप धर

परमानन्द प्रेम अति फूले
बीथिन फिरहिं मगन मन भूले।

तब श्रीरामचन्द्रजी घुटनों चलने लगे तब एक वानरका बच्चा और एक कौआ इनके साथ रहा करते और भांति भांतिके खेलोंमें शरीक रहते थे। वानरका बच्चा तो बड़े अदबसे हाथ जोड़े सेवामें रहा करता था। कभी कोई चुहल न करता था। परन्तु कौआ बड़ा ढीठ था। कभी उचककर भगवान्के हाथसे गिरा कौर उठाकर खा जाता, कभी हाथमेंसे पुआ छीन ले जाता था। एक बार पुआ छीन कर भगा, तो भगवान्ने कौएको पकड़नेको हाथ बढ़ाया। बेचारा कौआ तीनों लोकमें भागता फिरा परन्तु जहां जाता था, भगवान्के नन्हें हाथको पकड़नेके लिये पास ही पाता था। अन्तमें घबराकर दशरथके महलोंमें जहां भगवानको खेलते छोड़ा था लौट आया। श्रीरामजी उसकी बौखलाहट देखकर मुसकरा दिये। उसे बड़ा भारी मुख देख पड़ा। वह अन्दर चला गया। कई कल्पतक भगवान्के पेटमें अनेक ब्रह्मांड देखता रहा। घबराहटका ठिकाना न रहा। फिर भगवान् हंस दिये। ज्योंका त्यों बाहर आ गया। उसी तरह रामजीको खेलते पाया। चरणोंपर गिरा। भगवानने अपनी मायाका रहस्य उसे समझाया।

यह कौआ कागभुशुंडि थे। वानरका बच्चा हनुमानजी थे। चित्रमें भगवान्का कैसा सुन्दर भोलाभाला बालरूप दिखाया गया है। हनुमानजी और कागभुशुंडि दोनों पास ही मौजूद हैं। घबराये हुए कौएकी ओर मंद मंद मुसकाते भगवान् रामचन्द्र देख रहे हैं।

बाललीला बाललीला

सीता-जन्म

(८)

सीता-जन्म

(८)

एक बार रावणने ऋषियोंसे कर मांगा। ऋषियोंने कहा कि हमारे पास क्या है जो हम राजाको कर दें। रावणके दूतोंने नहीं माना तो ऋषियोंने अपने अपने शरीरसे लोहू निकालकर एक घड़ा भर दिया और रावणके यहां भिजवा दिया। यह भी सन्देसा भेजा कि यह घड़ा खुलेगा तो तुम्हारे परिवार का नाश हो जायगा।

रावण बड़ा चतुर था। इसने लंकासे बहुत दूर जनकपुरी, मिथिलापुरीमें, चोरीसे यह घड़ा गड़वा दिया। समझा कि न तो कोई इस घड़ेको खोलेगा न मेरा सर्वनाश होगा।

जबसे घड़ा गड़ा, मिथिलाके राजमें अकाल पड़ गया। प्रजा दुर्भिक्षसे घबरायी। मिथिलेश्वर राजा जनक बड़े ज्ञानी थे और प्रजाको अपनी सन्तान समझते थे। प्रजा भी उन्हें पिता करके मानती थी। वह जनक अर्थात् पिता कहलाते ही थे। उन्होंने ऋषियोंकी सभा करके सलाह की। सबने कहा कि एक यज्ञ करना चाहिये जिसमें राजा रानी अपने हाथों हल जोतें, तब यह अकाल दूर होगा।

यज्ञ हुआ। राजा रानीने हल जोता। हल चलते चलते एक जगह एक घड़ा निकल पड़ा, जोखमसे टूट गया। इस घड़ेमेंसे एक कन्या निकल पड़ी रोने लगी। राजा रानीने इसे देखा। हल रोककर कन्याको गोदमें ले लिया। हलसे जोती हुई धरतीको सीता कहते हैं। इस कन्याका नाम सीता रखा। पानी बरसा। सीताजी क्या प्रगट हुईं कि मिथिलाकी गई राजलक्ष्मी लौट आई। प्रजा सुखसे रहने लगी।

सीताजी बड़ी हुईं। एक दिन राजाका पूजा-घर साफ करना था। वहीं शिवजीका पिनाक नामका बड़ा भारी धन्वा रक्खा था। सीताजीने उसे हटाकर उसके नीचे साफ करके फिर ज्योंका त्यों रख दिया। राजाको बड़ा अचरज हुआ। उन्होंने ठान लिया कि जो वीर इस धन्वाको चढ़ायेगा या तोड़ देगा उससे ही इस कन्याका ब्याह करूंगा।

सीता जन्म। সীতার জন্ম।

राजा [illegible]

हुए तो गुरुजी [illegible]

हो। और [illegible]

इनका पराक्रम [illegible]

विश्वा[illegible]

करते थे तो [illegible]

मालूम हुआ कि [illegible]

विश्वामित्र [illegible]

किया। पुत्र [illegible]

पाकर संसार [illegible]

और बालकों [illegible]

राजा [illegible]

पत्थर ईश्वर [illegible]

विश्वामित्र ऋषिका आगमन

(६)

राजा ...

हुए तो ...

हीं । ...

इसका परन्तु ...

विश्वामित्र ...

करते थे तो राक्षस ...

मालूम हुआ कि यह ...

विश्वामित्र ...

किया । पूछा, महाराज ...

पाकर ...

वीर बालकोंको ...

राजा बड़े ...

पत्थर देकर रानी ...

विश्वामित्र ऋषिका आगमन

(६)

विश्वामित्र ऋषिका आगमन

(१)

राजा दशरथके चारों कुमार [illegible] पढ़ने गये। पांच बरसके हुए तो गुरुजीके यहां विद्या पढ़नेको बैठाले गये। थोड़े ही समयमें चारों विद्यायें पढ़ लीं। तीर धनुष चलाना [illegible]। छोटी ही अवस्थामें शिकार खेलने लगे। इनका पराक्रम और बहादुरी देखकर बड़े बड़े वीर पुरुष लजाते थे।

विश्वामित्र ऋषि गंगा और सरयूके दोआबेके जंगलोंमें रहते थे। जब वह यज्ञ करते थे तो राक्षस लोग बड़ा उपद्रव करते थे। [illegible] ध्यान किया। मालूम हुआ कि यह रामके ही हाथ मरेंगे।

विश्वामित्रजी राजा दशरथके यहां आये। राजाने ऋषिका बड़ा सत्कार किया। पूछा, महाराजने कैसे कष्ट किया? ऋषि बोले, राजन! राम, लक्ष्मण ऐसे पुत्र पाकर संसारमें तुमसे बढ़ा भाग्यवान कौन हो सकता है। मुझे राक्षस सताते हैं। इन वीर बालकोंको दीजिये तो मैं यज्ञकी रक्षा कराऊं।

राजा बड़े संकटमें पड़े। पर वशिष्ठजीके समझाने बुझानेसे अपनी छातीपर पत्थर रखकर राजी हो गये। दोनों बालक सौंप दिये। बोले,

मेरे प्रान नाथ सुत दोऊ।
तुम मुनि पिता आन नहिं कोऊ॥

বিশ্বামিত্র ঋষিকা আগমন।   বিশ্বামিত্র ঋষির আগমন।

ताड़का बध

(१०)

ताड़का वध

(१०)

म लक्ष्मणको साथ लिये विश्वामित्र मुनि जंगलमें चले जा रहे थे। अंधेरा
ता। विश्वामित्रको यह खटका था कि राक्षस रातमें ज़रूर चढ़ाई करेंगे।
ी हुई। एकाएकी उस अंधेरे जंगलमें आँधी आयी। विश्वामित्रजीने
न्द्रजीसे कहा, इसे आँधी मत समझिए। ताड़का राक्षसी बड़े वेगसे आकाश-
त रही है।

श्रीरामचन्द्रजी बोले, यह तो कोई स्त्री है। क्या इसपर भी बाण चलाना

ऋषि बोले, यह स्त्री है, पर महा हत्यारिणी है। नित्य एक तपस्वी ब्राह्मणको
खा जाना इसका व्रत है। हे कुमार! इसको मारनेसे हज़ारों पुण्यात्माओंकी
चेगी। आप क्षत्रिय हैं, आपका कर्त्तव्य है कि भक्तोंकी रक्षा करें। नारीके
े छोटे पापका डर न करके हजारों भक्तोंकी रक्षाका पुण्य लीजिये।

गुरुकी आज्ञा मान श्रीरामचन्द्रजीने अग्निबाण चढ़ाया, सारा जंगल जगमगा
ताड़काकी लाश आकाशपरसे लहराती और फड़कती हुई धरतीपर आ
। एक ही बाणमें ताड़काका प्राणान्त हो गया।

> *एकहिं बान प्रान हरि लीन्हा।*
> *दीन जानि तेहि निज पद दीन्हा॥*

তাড়কা বধ।

তাড়কা বধ।

अहिल्या उद्धार

(११)

अहिल्याका उद्धार

(११)

श्रीरामचन्द्रजीने आश्रममें पहुँचकर मुनिके यज्ञकी रक्षा की। सुबाहु आदि कई राक्षसोंको मारा। मुनिजीने प्रसन्न हो जितनी लड़ाईकी विद्या आती थी उन्हें सब कुछ सिखा दिया। कुछ दिन पीछे दोनों भाइयोंको लेकर जनकपुरीकी ओर चले।

राहमें जाते जाते एक आश्रम देखा जो बड़ा सुन्दर था, परन्तु वहाँ कोई रहने वाला देखनेमें न आया। राहमें एक बड़ा सा पत्थर देखकर श्रीरामचन्द्रजी मुनिसे पूछा, यह क्या है ?

मुनि बोले, आप ज़रा पाँवोंसे इसे छू दीजिए।

ज़रासा छूना था कि एक दिव्य मूर्त्ति सुन्दरी प्रकट हो गयी और वही भक्तिसे भगवान्‌के चरणोंपर गिर पड़ी। भगवान्‌ने हाथोंसे उठाकर खड़ा किया और पछताने लगे कि मैंने एक तपस्विनीको पाँवोंसे छू दिया।

तपस्विनीने भगवान्‌की स्तुति की और कहा कि मैं [illegible] अहिल्या हूँ। अपने पति गौतम ऋषिके शापसे पत्थर होकर अलक्ष पड़ी थी। मुनिने अच्छा किया जो शाप दिया कि मेरे माथेपर वह चरण-रज पड़ी जिसके लिए ब्रह्मा और शिव तरसते रहते हैं।

भगवान्‌की आज्ञासे अहिल्या भक्तिका वर पा अपने पति गौतमके पास चली गयी।

রঞ্জন   (অহিল্যা উদ্ধার)

प्रथम साक्षात
(१२)

प्रथम [illegible]

(१२)

एक ऋषिजी मुनि [illegible] साथ राम [illegible] पहुँच गए। राजा जनकने बड़ा आदर सत्कार किया और एक बड़े सुन्दर बगीचेमें ठहराया।

इस समय राजा जनकने अपनी कन्या [illegible] रचा था। अनेक देशोंके आशासे अनगिनत शूर वीर [illegible] आये थे। [illegible] श्रीरामचन्द्रजीको इसी समयको लाए थे।

एक दिन गुरुजीकी पूजाके लिए फूल लाने [illegible] दोनों भाई राजा जनकके बगीचेमें गये। मालीसे पूछकर फूल चुन रहे थे कि उसी समय अपनी सखियोंके साथ देवीकी पूजाके लिये सीताजी भी आयीं। [illegible] सबने देखा। भगवान् रामचन्द्रको देखकर सीताजीने निश्चय कर लिया कि मैं [illegible] ही वरूँगी।

सीताजी सोचती हुई देवीके मन्दिरकी ओर चलीं कि मेरे पिताने जो प्रतिज्ञा की है, यह धनुषका चढ़ाना बड़ा कठिन है, जो इनसे न टूटा तो पिताकी प्रतिज्ञा कैसे रहेगी। मन्दिरमें फूल लेकर देवीके सामने आयीं और हाथ जोड़ विनयसे प्रार्थना की। देवीकी पत्थरकी मूर्तिने मुस्करा दिया और बोली, "सीता तू जो चाहती है वही होगा।" सीताजी बड़ी प्रसन्न हो अपनी माताके पास लौटीं।

धनुषयज्ञमें श्रीरामचन्द्रजीने धनुषा तोड़ा और बड़ी धूमधामसे राम सीताका ब्याह हुआ।

प्रथम साक्षात। প্রথম সাক্ষাৎ।

धनुर्भंग

(१२)

धनुर्यज्ञ

(१३)

धनुष शिवजीका था। राजा जनकके यहां रखा था। एक दिन धनुष उठाकर सीताजीने उसके तले लीप दिया और फिर ज्योंका त्यों रख दिया। यह इतना भारी था कि सीताजीकी इस क्रियापर जनकजीको बड़ा अचंभा हुआ। प्रतिज्ञा की कि जो इस धनुषको तोड़ेगा उसे ही सीता वरेगी।

प्रतिज्ञा बहुत कठिन ठहरी। देश देशके शूरवीर, दैत्य, दानव, राक्षस और मनुष्य राजा आये, पर किसीसे तिलभर भी धनुष नहीं हटा। भरी सभामें राजा जनकने सब शूरवीरों और राजाओंको धिक्कारा। इस सभामें श्रीराम लक्ष्मण भी दर्शककी तरह मौजूद थे। लक्ष्मणजीसे जनकजीका धिक्कारना सहा नहीं गया। खड़े होकर उसका कड़ा उत्तर दिया और रामचन्द्रजीसे आज्ञा मांगी कि मैं धनुष तोड़ दूं।

श्रीविश्वामित्रजीने श्रीरामचंद्रजीको आज्ञा दी।

उठहु राम भंजहु भव चापू
मेटहु तात जनक परितापू

श्री रामचन्द्रजी गुरुकी आज्ञा पाकर उठ खड़े हुए। बड़ी गंभीरतासे धनुषके पास गये। उसे इतना आसानीसे और फुर्तीसे उठाकर चढ़ाया और चढ़ातेमें दो टुकड़े कर दिये कि बिजलीसी कौंद गई।

लेत चढ़ावत खैंचत गाढ़े
काहु न लखा देख सब ठाढ़े

धनुष टूटनेपर इतने ज़ोरका शब्द हुआ कि धरती डगमगा उठी, त्रिलोक हिल गया। विश्व घबरा गया। क्षणभरमें बात फैल गयी कि श्रीरामचन्द्रने पिनाक तोड़ डाला। परशुरामजी शिवजीके शिष्य थे। उन्होंने सुना कि गुरुजीके धनुषका अपमान हुआ, किसी राजकुमारने भरी सभामें उसे तोड़ डाला। क्रोधसे तिलमिला उठे। तुरन्त जनकसभाको प्रस्थान किया।

ধনুর্ভঙ্গ। ধনুভঙ্গ।

परशुराम-लक्ष्मण संवाद
(१४)

परशुराम-लक्ष्मण संवाद

(१४)

परशुराम थे मुनि, वेष था तपस्वियोंका, पर धनुष-बाण फरसा आदि अनेक हथियार धारण किये लाल लाल आँखें किये, बातकी बातमें सभामें आ धमके। राजा लोग अत्यन्त डर गये। विश्वामित्रजी परशुरामके मामा थे, वह मिले। दोनों भाइयोंकी भेंट करायी। परशुरामने कुछ बनावटी बातें करके जनकसे पूछा "क्यों राजन्, क्या मामला है, धनुष किसने तोड़ा? जिसने यह घोर कर्म किया है वह मेरा भारी वैरी है, वह तुरन्त दंडके लिये अलग हो जाय, नहीं तो सभी राजाओंको मैं मार डालूंगा।" राजा जनक तो डरके मारे कुछ न बोले, पर दोनों राजकुमारोंसे बातें होने लगीं।

राम०—मुनिवर, धन्वा तोड़नेवाला कोई आपका सेवक ही होगा, मुझे आज्ञा कीजिये।

परशु०—सेवक! अजी वह मेरा शत्रु होगा शत्रु!

लक्ष्मण०—लड़काईमें आजतक मैंने न जाने कितनी धनुहियां तोड़ी होंगी, आप कभी इतने नहीं खिझे। इसमें आपको क्या ममत्व है! रामजीके छूते ही तो टूट गया। उनका भी क्या दोष है? पुराने सड़े गले धनुषके टूटनेमें न तो कोई लाभ है न हानि!

परशु०—अरे! तू बड़ा ढीठ है। पिनाक क्या कोई साधारण धनुष है? मेरे गुरुका हथियार है। मैं तो इसके निरादर करनेवालेको मारकर गुरुका ऋण उतारूंगा?

लक्ष्मण०—अच्छा, तो वह ऋण हमारे ही मत्थे कढ़ा था?

[परशुराम मारनेको दौड़ते हैं, लेकिन हाथ २ करनेसे रुक जाते हैं]

परशु०—बहै न हाथ दहै रिस छाती। भा कुठार कुंठित नृप घाती।

राम०—ब्राह्मण देवता! आप कालरूपसे वृथा उलझते हैं। आपका पराक्रम सबसे अधिक है, हथियार रखना व्यर्थ है। पर आपको अपनी शूरताका बड़ा दिमाग है। हमतो ब्राह्मणसे शूरता करनेका गर्व नहीं रखते, पर आपकी ललकार है तो मैं मुकाबलेको तय्यार हूं। काल भी ललकारे तो सुखसे लड़ूं। वैसे तो आप ब्राह्मण हैं, मुनि हैं, आपका चरण मेरी छातीपर हो तब भी मैं आपको प्रणाम ही करूंगा।

परशु०—[वक्षस्थलपर भृगुलता देखते हुए] रामजी, मुझे सन्देह होता है। अच्छा, लीजिये यह विष्णुका धनुष तो चढ़ाइये।

विष्णुका धनुष परशुरामजी देनेको ही थे कि वह आप ही श्रीरामचन्द्रजीके हाथोंमें चला गया। परशुराम यह देखकर बड़े अचंभेमें पड़ गये। बड़ी स्तुति की,

परशुराम-लक्ष्मण संवाद

(१४)

परशुराम थे मुनि, वेष था तपस्वियोंका, पर धनुष-बाण फरसा आदि अनेक हथियार धारण किये लाल लाल आंखें किये, क्रोधसे कांपते सभामें आ धमके। राजा लोग अत्यन्त डर गये। विश्वामित्रजीने परशुरामके मामने गे, यह मिले। दोनों भाइयोंकी भेंट करायी। परशुरामने कुछ बनावटी बातें करके जनकसे पूछा "क्यों राजन्, क्या मामला है, धनुष किसने तोड़ा? जिसने यह घोर कर्म किया है वह मेरा भारी वैरी है, वह तुरन्त इसके लिये अलग हो जाय, नहीं तो सभी राजाओंको मैं मार डालूंगा।" राजा जनक तो डरके मारे कुछ न बोले, पर दोनों राजकुमारोंसे बातें होने लगीं।

राम०—मुनिवर, धनुष तोड़नेवाला कोई आपका सेवक ही होगा, मुझे आज्ञा कीजिये।

परशु०—सेवक! अजी वह मेरा शत्रु होगा शत्रु!

लक्ष्मण०—लड़काईमें आजतक मैंने न जाने कितनी धनुहियां तोड़ी होंगी, आप कभी इतने नहीं बिगड़े। इसमें आपको क्या ममता है? रामजीके छूते ही तो टूट गया। उनका भी क्या दोष है? पुराने सड़े गले धनुषके टूटनेमें न तो कोई लाभ है न हानि!

परशु०—अरे! तू बड़ा ढीठ है। शिवका क्या कोई साधारण धनुष है? मेरे गुरुका हथियार है। मैं तो इसके निरादर करनेवालेको मारकर गुरुका ऋण उतारूंगा?

लक्ष्मण०—अच्छा, तो वह ऋण हमारे ही मत्थे चढ़ा था?

[परशुराम मारनेको दौड़ते हैं, लक्ष्मणके होंठ २ फड़कने लग जाते हैं]

परशु०—कहि न जाय कहँ रिस छाती। आ कुठार कुंठित नृप घाती।

राम०—ब्राह्मण देवता! आप बालकसे वृथा उलझते हैं। आपका वचन वज्रसे अधिक है, हथियार रखना व्यर्थ है। पर आपको अपनी शूरताका बड़ा दिमाग है। हमतो ब्राह्मणसे शूरता करनेका गर्व नहीं रखते, पर आपकी ललकार है तो मैं मुकाबलेको तैयार हूं। काल भी ललकारे तो मुझसे लड़ूं। वैसे तो आप ब्राह्मण हैं, मुनि हैं, आपका चरण मेरी छातीपर हो तब भी मैं आपको प्रणाम ही करूंगा।

परशु०—[वक्षस्थलपर भृगुलता देखते हुए] रामजी, मुझे सन्देह होता है। अच्छा, लीजिये यह विष्णुका धनुष तो चढ़ाइये।

विष्णुका धनुष परशुरामजी देनेको हो ये कि धनुष आप ही श्रीरामचन्द्रजीके हाथोंमें चला गया। परशुराम यह देखकर बड़े अचंभेमें पड़ गये। बड़ी स्तुति की,

परशुराम लक्ष्मण संवाद।

পরশুরাম-লক্ষ্মণ সংবাদ।

कैकयी और मंथरा

(१५)

कैकयी और मन्थरा

(१५)

श्रीरामचन्द्रजीका ब्याह हुए बारह वर्ष हो गये। ननिहालसे बुलावा आनेपर भरत और शत्रुघ्न चले गये थे। भरतकी माता कैकयी नहीं गयीं। राजा दशरथ बूढ़े हो गये थे। राजकाज अधिकांश श्रीरामचन्द्रजी चलाते थे।

एक दिन दर्पणमें अपने उजले केश देख राजा दशरथके मनमें यह बात आयी कि रामचन्द्रजीको युवराज पद देकर मैं संसारके कामोंसे छुट्टा लूं। गुरु वशिष्ठजीको भी यह बात पसन्द आयी और राजसभाने भी अपनी स्वीकृति दी। राजाने पौर और जानपदसे भी सलाह ले ली। सबने एक मत हो श्रीरामचन्द्रजीके पक्षमें मत दिया। परन्तु राजाने कैकयीसे न पूछा। राजतिलकका प्रबन्ध चुपके चुपके ही हो रहा था। कैकयीकी कुबड़ी लौंडी मन्थराने पता पाया तो दौड़ी रानीके पास गयी। पहले तो रामका तिलक सुन रानी प्रसन्न हुई पर मन्थराने उसे बहुत ऊंच नीच समझाया। फुसलानेकी बातें कीं। सवतिया डाहका भाव मनमें गहरा बैठाया। अन्तमें रानीके मनमें यह बात बैठ गयी कि मुझसे जान बूझकर यह बात छिपायी गयी है। कैकयीका ब्याह इस शर्तपर हुआ था कि राजगद्दी कैकयीकी सन्तानको मिलेगी। क्या बात है कि भरतको ननिहाल भेजकर रामको राज दिया जा रहा है? कैकयीके मनमें आग सुलगी। उसके दो वरदान भी थाती रखे हुए थे। मन्थराने उसकी याद दिलायी।

कैकयी और मंथरा।   (केकरी अपस्वश)।

कैकयी कोपभवनमें

(१६)

कैकयी कोपभवनमें

(१६)

मंथराने जो कुटिलताका पाठ पढ़ाया, बहुत गहरे असर कर गया। रानीका सौम्य हृदय बदल गया। सलाह तो हो ही चुकी थी। उसने अपने कपड़े और जेवर उतार फेंके। फटे पुराने मोटे कपड़े बुरी तरहसे पहनकर क्रोधका रूप बना लिया और जमीनपर लेट गयी।

राजा दशरथको रनिवासके भीतरका हाल मालूम न था। कल ही रामको तिलक होनेवाला है। आज चलकर अपनी प्यारी रानी कैकयीको सुसमाचार सुनाना चाहिये। बड़े चावसे यही मनसूबे करते राजा दशरथ जो महलके द्वारपर आये, तो कैकयीकी लौंडी बोली, "सरकार तो कोपभवनमें हैं!" सुनते ही राजा धकसे रह गये। उनके उत्साहको पाला मार गया।

"कोपभवन सुनि सकुचे राऊ।
भयबस अगहुड़ परइ न पाऊ॥"

जिस किसी तरह भीतर पाँव रखते ही जो दृश्य देखा तो पाँव तलेसे मिट्टी निकल गयी। मामला बेढब था। आगे बढ़कर रानीसे लगे पूछने। बहुत मनाया। कहने सुननेपर उठी और फिरसे शृङ्गार किया। राजा सन्तुष्ट हुए। क्रोधका कारण पूछने लगे। प्रसन्न करनेके लिये वादे किये।

"जयसि मांगु मन भावति बाता।"

वनवासकी आज्ञा

(१७)

वनवासकी आज्ञा

(१७)

कैकयी शृङ्गार करते करते बोली "मांग मांग, बहुत कहते हो, पर कभी कुछ देते भी हो। एक बार दो वरदान का वादा किया था, आजतक न मिला।" इसपर राजाने रामकी सौहँ खाकर दो वरदान देनेका तुरन्त वादा कर लिया। जब राजा खुशीसे बैठे, रानीने उनके आनन्दमें दो वर मांगकर वज्रसा गिरा दिया। बोली कि युवराज भरत हों, और सबेरा होते होते श्रीरामचन्द्रजी चौदह बरसके लिए बनवासको चले जायँ। राजा दशरथने पहले सोचा कि हँसी कर रही है, परन्तु जब निश्चय हो गया कि सचमुच ऐसा कठोर वर मांग रही है, तो राजाको पहले तो मूर्च्छा आ गयी। कुछ देरमें जब सचेत हुए कैकयीको बहुत कुछ ऊँच नीच समझाया, पर उसके मनमें कोई बात न बैठी।

रोते बिलखते सबेरा हो गया। रातभर सोये नहीं। निठुर कैकयी पलँगके पास खड़ी अपनी बातपर अड़ी थी। राजा दशरथ रंजके मारे सिर नहीं उठाते थे। भोर होते ही श्रीरामचन्द्रजी बुलाये गये। राजाने तो रंजसे सिर भी नहीं उठाया। श्रीरामचन्द्रजी महलके भीतर आये तो राजाकी दशा देखकर व्याकुल हो गये और कैकयीसे सब माजरा पूछने लगे। कैकयीने कुटिल ढंगसे कहा "बेटा! राजाने तुमको चौदह बरसका बनवास दिया है। चाहो तो अभी बनको प्रस्थान कर पिताकी बात पूरी करो।" श्रीरामचन्द्रजीने कहा, "पिताजीको इतनी छोटी बातपर रंज न करना चाहिये। चौदह बरस तो क्या अगर जीवनभर बनवास करना हो, तो माता पिताकी आज्ञा सिर आँखोंपर है।"

बनवास की आज्ञा। बनবাসের আজ্ঞা।

निगमन

(१८)

वनगमन

(१८)

राम लक्ष्मण सीता तीनों वनके लिये तय्यार हुए। राजवंशके कपड़े और जवाहरात उतारकर वनके तपस्वियोंका पहिरावा पहिन लिया। राजाने सुमन्तको बुलाकर कहा "सुमन्त, तुम समझदार हो। देखो, रामचन्द्रजी मेरी बातके निबाहनेपर अड़ गये हैं। जंगलतक तीनोंको ले जाओ। वन दिखाकर समझा बुझाकर लौटा लाना। मैं बूढ़ा हुआ वचन हार गया, पर रामचन्द्रजी क्यों मेरा वचन मानते हैं! बहुत कहनेपर अगर वह दोनों भाई न लौटें, तो मैथिलीको जरूर लौटा लाना, वह कहां जंगलोंमें फिरेगी! भाई जैसे बने मेरे जीनेका बन्दोबस्त करो!"

सुमन्त रथ वहां लाये जहां तीनों जन गुरुजीसे बिदा हो रहे थे। रथपर सवार कर लिया।

यहां सारी अयोध्यामें बात फैल गयी थी। मंगलाचारकी जगह कुहराम मच गया था। सारी प्रजा रो कलप रही थी। नर-नारी बूढ़े-बच्चे रथके साथ रोते कलपते चले। रामचन्द्रजीने बहुतेरा समझाया पर किसीने न माना। रथ संभाले नहीं संभलता था। सुमन्तका सिर रंजसे ऊपर नहीं उठता था। शोकका पहाड़ टूट पड़ा था। धीरे धीरे रथ सारी भीड़को लिये पांच कोस अयोध्यासे बाहर पहुंचा। वहीं पड़ाव हुआ। लोग रंजमें थे। भूखे प्यासे थके मांदे। कुछ भगवानकी माया भी थी। सब सो गये। श्रीरामचन्द्रजीने तड़के चार बजे ही उठकर सुमन्तसे कहा—

> *"खोजमारि रथ हांकहु ताता।*
> *आन उपाय बनिहि नहि बाता॥"*

रथ निकल गया कई कोस, तब सवेरे लोग जागे। कहीं पहियेका निशान भी न मिला। लोग दौड़ धूपकर रह गये। रो पीटकर फिर लौट गये।

বনগমন।

বনগমন .।

श्रीरामपर केवटकी भक्ति

(१६)

केवटकी झाँकी

(१९)

श्रीराम लक्ष्मण सीता सहित शृंगवेरपुरमें एक रात रहे। वहींसे सुमन्त्रको लौटा दिया। सबेरे गङ्गा पार आनेको नाव माँगी। केवट आया। हाथ जोड़ कर बोला—

"सरकार, आपके चरण पहले धो लूंगा तब नावपर चढ़ाऊँगा!"

राम०—"भला क्यों, इसकी क्या आवश्यकता है?"

केवट०—"महाराज, पत्थरसे तो काठ मुलायम होता है। आपके चरण रजके प्रभावसे पत्थरसे अहल्या हो गयी। फिर कहीं वही धूल लकड़ीकी नावको मुनिकी स्त्री बना डाले तो मेरी तो रोजी गयी, बाल बच्चे क्या खायेंगे। सो, महाराज, यह धूल धोकर इन चरणोंको नावपर चढ़ने दूंगा, खेवा नहीं लूंगा। आपके पिता राजा दशरथकी सौंह बिना चरण धोये मानूंगा नहीं—नहीं, महाराज, मैं—

[श्री लक्ष्मणजीने शोखीपर धरा आँख तरेरा]

नहीं माननेका, चाहे लक्ष्मणजी तीरसे मेरा सर क्यों न उड़ा दें, महाराज मैं चरण अवश्य पखारूंगा!

राम०—(हंसकर) अच्छा भाई, ले वही कर जिससे तेरी नाव बची रह जाय।

प्रेमके पुतले केवटने पानीका कठौता लाकर भगवान्‌के पाँव पखारे, पवित्र चरणामृत घर भरको पिलाया, अपने गाँव भरको पवित्र किया, पहले सबको भवसागर पार उतार लिया, तब भगवान्‌को गंगापार ले जानेको तैयार हुआ।

पार उतरकर भगवती सीताजी मणिमुंदरी उतारकर खेवा देने लगीं। केवट हाथ जोड़कर बोला—

"कृपासिंधु, आज जो खेवा मैंने पेशगी पाया किस केवटके नसीबमें था? मैं खेवा लेने लायक होता तो अवश्य लेता।" बहुत आग्रहपर बोला "लौटती बेर जो दीजियेगा ले लूंगा।" किसकी लौटती बेर? चतुर केवट तो भगवान्‌के उस लोकमें गया जहाँकी "लौटती बेला" है ही नहीं। धन्य प्रेमका वाक्‌पाटव!!!

भरतको पादुका प्रदान

(२०)

भरतको पादुका-पूजन

(२०)

अब सुमन्त खाली लौटा राजा दशरथकी रही सही आशा टूट गयी। वियोगमें देह छूट गयी। सारे नगरमें कुहराम मच गया। गुरुने भरत शत्रुघ्नको ननिहालसे बुलवाया। राजकुमारोंने घरका सारा हाल सुना, सिर धुना। कोई बात समझमें नहीं आयी। लाचार मृतक कर्म किये। जब शुद्ध हुए, राजसभा बैठी कि भरतजीको राज दिया जाय। गुरुने, माताओंने, राजपुरुषोंने, विद्वान जो जो समझा सकते थे सबने, भरतको समझाया बुझाया, पर भरतजी बड़े भाईके ऐसे माननेवाले थे कि उन्होंने निश्चय किया कि राज रामका है, उन्हींको सौंपूंगा। माताकी भूल थी। परन्तु मैं भूल क्यों करूं। चलो सब चलें। वनमें ही रामको राजतिलक करके ले आवें।

सारी राजसभा और परिवार चला रामको मनाने। चित्रकूटमें भाई भाई प्रेमसे मिले। भगवान् रामचन्द्रजीको पिताकी मृत्यु सुनकर बड़ा शोक हुआ। उस दिन निराहार बीता। वहां भी श्राद्ध हुआ।

फिर कई सभाएं हुईं। भगवान् रामचन्द्रजीने समझाया कि पिताकी प्रतिज्ञाको निबाना हम सबोंका परम कर्त्तव्य है। जाओ, चौदह बरस बिताओ और राजकाज करो।

अन्तमें भरतजी इसीपर राजी हुए कि आप मुझे अपनी खड़ाऊं दीजिये। उसीको गद्दीपर बिठाकर चाकरकी तरह चौदह बरस राज संभालूंगा।

> प्रभु करि कृपा पाँवरी दीन्ही
> सादर भरत सीस धरि लीन्ही

सब लोग उदास अयोध्या लौटे।

भक्तको पादुका प्रदान।

पंन्द्रहवें

(२१)

पंचवटी

(२१)

भगवान् रामचन्द्रजी चित्रकूटमें बड़े मनोहर स्थानमें रहते थे।

एक दिन सुन्दर स्फटिक शिलापर श्रीरामचन्द्रजी सीता सहित विराजमान थे।

इन्द्रके लड़के जयन्तके मनमें सन्देह था कि श्रीरामचन्द्रजी वस्तुतः देवताओंका दुःख मिटानेको अवतरे हैं, या साधारण मनुष्य हैं। इसलिये उसने चाहा कि उनके बलकी परीक्षा लूं। कौआ बनकर सीताजीके चरणमें चोंच मार कर भागा। रक्त बहते देख श्रीरामचन्द्रने एक सींक उठाकर धनुषपर चढ़ाया और कौएके लिये छोड़ा। बेचारा कौआ तीनों लोकमें फिरा। कहीं शरण न मिली। अन्तमें नारदके दूरसे ही कहनेपर भागते भागते भगवानके ही चरणोंमें गिरा। श्रीरामचंद्रजीका बाण अचूक था। प्राण नहीं लिये पर उसकी एक आंख नष्ट हो गयी।

अ- सूयाका सीताको उपदेश

(२२)

अनसूयाका सीताको उपदेश

(२२)

जब श्रीरामचन्द्रजीने देखा, कि यह जगह सबकी देखीभाली हो गयी। लोग अधिक आने जाने लगे। तब चित्रकूटसे प्रस्थान किया। जातीबेर वहांके प्रसिद्ध तपस्वी अत्रिजीके आश्रमपर गये। अत्रिने अपनेको कृतार्थ माना। बड़ी स्तुति की। भगवान्‌को पञ्चवटी जाकर रहनेकी सलाह दी। उनकी स्त्री अनसूयाजीने श्रीसीताजीसे मिलकर उनकी बड़ी आवभगत की। दिव्य कपड़े और गहने पहनाये। दोनों पातिव्रत धर्मपर बातचीत होती रही।

फिर तीनों जने बिदा हुए।

कह रिषिबधू सरस मृदु बानी। नारिधरम कछु ब्याज बखानी॥
मातु–पिता–भ्राता–हित–कारी। मितप्रद सब सुनु राजकुमारी॥
अमितदानि भर्ता बैदेही। अधम सो नारि जो सेव न तेही॥
धीरजु धरम मित्र अरु नारी। आपदकाल परखिअहि चारी॥
बृद्ध रोगबस जड़ धनहीना। अंध बधिर क्रोधी अतिदीना॥
ऐसेहु पति कर किये अपमाना। नारि पाव जमपुर दुख नाना॥
एकइ धरम एक ब्रत नेमा। काय बचन मन पतिपद प्रेमा॥
जग पतिब्रता चारि बिधि अहहीं। बेद पुरान संत सब कहहीं॥
उत्तमके अस बस मन माहीं। सपनेहु आन पुरुष जग नाहीं॥
मध्यम परपति देखइ कैसे। भ्राता पिता पुत्र निज जैसे॥
धरम बिचारि समुझि कुल रहई। सो निकृष्ट तिय स्रुति अस कहई॥
बिनु अवसर भय तें रह जोई। जानेहु अधम नारि जग सोई॥
पतिबंचक पर-पति-रति करई। रौरव नरक कलपसत परई॥
छन सुख लागि जनम सत कोटी। दुख न समुझ तेहि सम को खोटी॥
बिनु स्रम नारि परम गति लहई। पति-ब्रत-धरम छाड़ि छल गहई॥
पति प्रतिकूल जनम जहँ जाई। बिधवा होइ पाइ तरुनाई॥

पुर्खाखाको खण्ड

(२३)

शूर्पणखाको दण्ड

(२३)

भगवान् रामचन्द्रजी लक्ष्मण और सीता समेत पंचवटीमें बड़ी सुन्दर कुटी बनाकर रहने लगे। इतने कालतक रहे कि दंडकवनके रहनेवाले तपस्वी, जंगली लोग और पशु पक्षीतक जान गये।

गृद्ध जटायु राजा दशरथके बड़े पुराने मित्र थे। उनसे भी भेंट हो गयी थी। भगवान् रामचन्द्रजी यहां बहुत दिनतक रहे।

जब वनवासके तेरह बरस बीत चुके थे तबकी बात है। एक दिन एक राक्षसी सुन्दर भेष बनाकर आयी और भगवान् रामचन्द्रजीसे बड़ी निर्लज्जतासे बोली—

"मैंने तीनों लोकमें खोजा है, मेरे समान सुन्दर पुरुषरत्न नहीं मिला कि ब्याह करूं। मेरा जी आपपर आ गया। जान पड़ता है कि ब्रह्माने आपको और मुझको जान बूझकर सौंदर्यकी जोड़ी बनायी है।"

राम—(शूर्पणखाको पहचानकर) "सुन्दरी! मेरा तो ब्याह हो चुका है। जैसी तुम कुमारी हो, वैसा ही मेरा छोटा भाई कुमार है। उससे कहो, शायद ब्याह कर ले।"

लक्ष्मणजीसे जाकर उसने वही बातें कहीं। लक्ष्मणजी बोले "सुन्दरी, मैं उनका दास हूं, तुझे मुझसे क्या सुख मिलेगा। वह मालिक हैं, चाहें तो कई ब्याह कर लें।"

इसपर खिसियानी रामचन्द्रजीके पास भयंकर राक्षसी रूपसे गयी और बोली "लो मैं तुम्हारी स्त्रीको खाकर अपनी राह निष्कंटक कर लेती हूं।" सीताजीको डरती देख, श्रीरामचन्द्रजीके इशारेपर लक्ष्मणजीने नाक कान काट लिये।

यह शूर्पणखा रावणकी बहिन और विधवा थी। रामलक्ष्मण इसे पहचान गये थे।

सूर्पणखाको दण्ड । সূর্পণখার প্রতি দণ্ডবিধান ।

स्वर्ण-मृग

(२४)

स्वर्ण-मृग

(२४)

शूर्पणखा चिल्लाती हुई खरदूषण त्रिशिराके पास गयी। चौदह हजार राक्षसोंकी सेना लेकर यह लड़ने आये अकेले श्रीरामचन्द्रजीने एक एक करके सबको स्वर्ग पहुँचा दिया।

भाइयोंका नाश देखकर दौड़ी रावणके पास गयी। सारा हाल कहा। बहुत रोयी कलपी।

रावणने सोचा कि सुना है कि मेरे मारनेको रामावतार हुआ है। यों ही पहुँचकर लड़ना और मारा जाना ठीक न होगा। उनकी स्त्री हर लाऊँ तो बदला ठीक होगा। अगर भगवान हुए तो मरना है ही। न हुए तो मेरा कुछ न कर सकेंगे। यह विचार रावणने शूर्पणखाको तसल्ली दी और समुद्रपार मारीचके पास आया। बहुत समझा बुझाकर उसने मारीचको राजी किया कि श्रीराम और लक्ष्मणको किसी बहाने सीताजीसे दूर करे तब रावण अपनी चाल चले।

मारीच सोनेका हरिण बनकर पंचवटीमें कुटीके पास आकर चरने लगा, इधर उधर फिरने लगा। श्रीसीताजीकी निगाह उसपर पड़ी। उन्होंने भगवान्से कहा "यह अनोखा सुनहला हरिण है, इसका मृगछाला बड़ा सुंदर होगा, इसे अवश्य मारकर लाइये।"

माया-मृग तो था ही, भाग चला। श्रीरामचन्द्रजी उसके पीछे चले। बहुत दूर जानेपर उसे मारा तो वह जोरसे चिल्लाया "लक्ष्मण।" सीताजीने लक्ष्मणको भेजा कि देखो शायद भगवान्को कोई संकट पड़ा है, तभी तो जोरसे तुम्हें पुकारते हैं।

স্বর্ণ-মৃগ। সোনার হরিণ।

भिक्षुकके भेषमें रावण

(२५)

भिक्षुकके भेषमें रावण

(२५)

कुटी सूनी पाकर संन्यासीका रूप धरकर रावण भिक्षा मांगने आया। सीताजी भिक्षा लेकर निकलीं। वह ज़रा दूर खड़ा था। उसने कहा कि मैं बंधी भीख नहीं लेता। मुझे सीमासे बाहर आकर भिक्षा दीजिये। निर्भय सीता बाहर निकलकर भीख देने आयीं। तभी उसने पकड़ लिया।

अब उसने अपना असल रूप प्रकट किया। सीताजीने धैर्य धारण करके कहा "खड़ा रह दुष्ट! अभी भगवान् आकर तेरी खबर लेते हैं।" परन्तु रावण क्यों ठहरने लगा। उसने पास ही कहीं रथ छिपा रखा था। उसीपर बैठाकर भाग चला।

ভিক্ষুকবেশে রাবণ।

भिक्षुक वेषमें रावण।

जटायुका बध

(२६)

जटायुका वध

(२६)

रथ बड़े वेगसे जा रहा था। सीताजी भी जोरसे चिल्ला रही थीं। यह रथ जिस ओर जा रहा था उसी ओरसे आते हुए गीध जटायु मिला। उसने सीताको पहचाना और रथपर चढ़ाई की। रावणको मारकर बेदम कर दिया और सीताको रथसे निकालकर दूर बिठाया और फिर रावणसे भिड़नेको लौटा।

बूढ़े जटायुने अपने बलभर पूरी लड़ाई की। अन्तमें महा बलशाली रावणने बूढ़े जटायुको अधमरा कर दिया और सीताजीको फिरसे रथपर बिठाया और चल दिया।

জটায়ু-বধ ।

জটায়ু-বধ ।

भक्तोंपर भगवानकी दया

(२७)

शबरीके बेर

(२७)

श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मणसमेत जब कुटीपर पहुँचे, सूनी पायी। रोते कलपते सीताकी खोजमें चले। खोजते खोजते राहमें अधमरा जटायु मिला। उसने सीताहरणकी कथा कही। कहा कि रावण लेकर दक्षिण दिशामें गया है। मेरी यह गति की। अब मैं अपने प्राणोंको आपके चरणोंमें अर्पण करता हूँ।

इतना कह गृध्रराजने प्राण छोड़ दिये। श्रीरामचन्द्रने उसकी प्रेत-क्रिया की। फिर आगे बढ़े। कबन्ध मिला। उसे मार डाला। मुनियों ऋषियोंसे पता लगाते लगाते शबरीके आश्रममें पहुँचे।

शबरी भिलिन बहुत दिनोंसे रामकी बाट देखती थी। गुरुने कहा था कि भगवान् आवेंगे उनका सत्कार करना। वह नित्य प्रेमसे चख चखकर मीठे फल उनके लिये रखा करती थी। आखिर एक दिन भगवान् आ ही गये। उसने मीठे मीठे बेर जो चुनकर रखे थे, लाकर सामने रखा। भगवानने सराह सराहके खाया। उसे नव प्रकारकी भक्ति बतलायी और उसे अपना धाम देकर आगे बढ़े।

भक्तोंपर भगवानकी दया ।

ভক্তগণের প্রতি ভগবানের দয়া ।